(IJPS) 2016, Vol. No. 1, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

एकभारतम् : आधुनिक परिप्रेक्ष्य में

डॉ गोविन्द राम चरोरा

संस्कृत विभाग, महारानी श्री जया राजकीय महाविद्यालय भरतपुर

EKBHARATAM: IN MODERN PERSPECTIVE

Dr. Govind Ram Charora

Department of Sanskrit, Maharani Shri Jaya Govt. College, Bharatpur

रूपकों की दृष्टि से प्राधुनिक संस्कृत साहित्य प्रत्यधिक समुन्नत एवं समृद्ध है। घालोच्य युग में ही हिन्दी साहित्य की प्रवृत्ति छायावाद 1936 ई. के आते-प्राते जब अपनी अन्तिम सांसे गिन रहा था, तब ही केरल के कवि ई. पी. भरतपिषारटी ने संस्कृत भाषा में चार प्रहों के एक विलक्षण लघु- नाटक एकभारत म्' का प्रणयन किया।

आलोच्य नाट्य-कृति के माध्यम से विद्वान् लेखक ने वर्तमान युग को ज्वलन्त समस्या ऋषियों की कर्मभूमि अखिल भारतवर्ष की एकता, अखण्डता एवं समृद्धि को बनाये रखने को व्यक्त किया है। लघुनाटक के परिशीलन से ज्ञात होता है कि लेखक अपने परिप्रेक्ष्य के प्रति पूर्णतः संवेदनशील है।

पिषारटी जी का चिन्तन, शिल्पयोजना, हिन्दी-साहित्य की प्रवृत्ति, छाया- बाद एवं अपने देशकाल व वातावरण से पूर्णतः प्रभावित है। छायावाद को प्रमुख विशेषताओं प्रात्माभिव्यञ्जना, प्रकृति का मानवीकरण, विश्वबन्धु- त्व, मानवता, नूतन-छन्दः विधान' प्रतीकलक्षण, व्यञ्जना-प्रयोग इत्यादि का समावेश पिषारिटी जी ने अपनी कृति में किया है।

इस लघुनाटक एकभारतम् का कथ्य रामायण, महाभारत एवं इतिहास यादि से उद्धृत नहीं है, प्रपितु विद्वान् कवि के अन्तःस्थल में विद्यमान राष्ट्र-एकता, प्रखण्डता एवं मानवता की भावना की ही अभिव्यञ्जना है। राष्ट्र-भक्ति की भावना की प्रभिव्यक्ति कवि ने प्राकृतिक पदार्थों को

अपनी नाट्य-कृति में मानवीय-पात्रों के रूप में चित्रित करके की है। प्राकृतिक पदार्थों मेंहिमालय, गङ्गा, समुद्र, गोदावरी, पर्णाशा आादि नदियां हैं, जो भारतभूमि की ग्रखण्डता व समृद्धि के लिये प्राणपण से समर्पित हैं। दूसरी भोर मरु दुभिक्ष, महारोग धादि पात्र हैं, जो वर्तमान समय के देशद्रोही, मातङ्कवादी, उग्रवादी व गद्दार-वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो अखण्ड भारत को खण्ड- खण्ड करने व इसकी सुख-समृद्धि को विनष्ट करने पर तुले हुए हैं।

हिमालय से समुद्र पर्यन्त भारत, एकता के सूत्र में निबद्ध है। परन्तु मानवता के इन शत्रों ने भाषा, धर्म, धन, प्रान्त, वर्ण आादि अनेक उपाधियों के द्वारा एक-सूत्र-बढ भारत की विभिन्न क्षेत्रों में बांट दिया है। नाटयकार ने इस समस्या को उद्घाटित करते हुए प्रस्तुत प्रारम्भ में नायिका राजा के द्वारा बीज रूप में बदलवा दिया है-

भाषा-धर्म-वसु-प्रान्त-वर्णादिमित्याधिभिः।

एकीकोऽपि विभाजितः।।[2]

गङ्गा अपनी सहयोगिनी पाशा की इस देश-द्रोही भीमाकार विशा के नाम का करते हुए कहती है कि भारत के रिश्थर्य में बाधा उत्पन्न करने वाले ये पिशाच, मर-भीषण-काल, चक्रवात, प्रतिवृष्टि] मृग तृष्णिका आादि यहाँ सर्वत्र भ्रमण कर रहे हैं। गा कहती है-"भारतस्यै-श्वर्ये बाधामापादयन्तः केचन भीमाकाराः इह सर्वत्राहिण्डन्त इति।[3] "वर्तमान में प्रातङ्कवादी और उग्रवादी राष्ट्रघाती थे ये है-

तेषां ननु प्रमुख एव मयंदाशां

मूर्ध्ना वहन्त्यखिलनाशकराः करालाः।

वात्याऽतिवृष्टिरतिभीषणचक्रवात-

स्तीवाभितापजननी मृगतृष्णिका च

वन्दनीया भूमि की दुर्गति करने वाले ये भीमकाय दैत्य सुनिश्चित प्रायोजित कार्यक्रम निर्धारित करते हैं। महारोग नामक पात्र के द्वारा इसका एक दृश्य द्रष्टव्य है- 'प्रत्र भवतः कृपया यच्चिन्त्यते तत्तथैव प्रायशः साधितं भवति। यथा हि-

मद्रप्व्ययविपूचिका विसृमग जागति करण टिके-

(IJPS) 2016, Vol. No. 1, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

पूरसृष्टाः कठिनाबुंदा नयनरुग्जालानि चावन्तिपु।
काश्मीरेषु विषज्वरा विदधते सांहारिक ताण्डवं
यं देशं प्रविशामि सोऽतिकरुण व्याक्रोणतीवानिशम्॥[4]

वर्तमान युग की ताजा समस्या दुर्भिक्ष की भी है। प्रकाल ने जन-मानस को दयनीय, सोचनीय अवस्था में पहुंचा दिया है। मानव की हालत बद से बदतर बना दी है। जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों से ढका हुआ मानव शरीर प्रर्धनग्न रूप में ही दृष्टिगोचर होता है। तन ढकने की बात तो दूर, एक समय के भोजनाभाव में अधिकांश का शरीर कृशता को प्राप्त करता जा रहा है। ग्राज के इस वास्तविक सत्य का उद्घाटन दुर्भिक्ष को ही पात्र बनाकर इस प्रकार किया है-

जाएँ: शीर्ण विवरणं वस्त्रशकराच्छादितानग्नता
उन्नम्रास्थिनि गण्डके परिगतास्ते केश: खराः।
स्वेदासारकपूतिगन्धि चवीच सायदो
मो दुमिक्ष पर व्यनक्ति विजयोदन्तांस्तववातिः॥[5]

ऋषियों की इस तपोभूमि को पूर्णतः विनष्ट करके ये समाजकष्टद चाहते हैं कि यहां तन ढकने को वस्त्र भी अप्राप्य हो । यहाँ का प्रत्येक प्राणी प्रश्न के प्रभाव में प्रार्तनाद करे। चारे के प्रभाव में यहां का गौ-वन विनष्ट हो जाय। यहां तक कि कुछों को जल से तथा सेतों को सस्य-सम्पदा से रहित बना दें। एक सच्चे राष्ट्रभक्त के अन्तःकरण एवं मर्मस्थल को स्पर्श करने वाला यह कारुणिक स्य क्या नकसीर नहीं डालेगा कवि अपते युगीन वातावरण के प्रति पूर्ण सजग है। वह सभी को इस मार्मिकश्य से अवगत करा देना चाहता है। यथा

प्रायो निर्वसनीकृताखिलजना निर्दकेदारका
मन्त्रालामतवालेनादविकलप्राणोत्तपट्टारकाः।
निष्प्राणीकृतीव्रजा निन्दकोच्छुपान्तराः
वन्ध्यीभूतविनष्ट-सस्यविभवाः ग्रामातरूपान्तराः॥[6]

(IJPS) 2016, Vol. No. 1, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

इतना ही नहीं, कवि देशमत व राष्ट्र की समृद्धि व प्रखण्डता के लिये प्राण से समर्पित लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाले गा, हिमालय प्रादि पात्र के माध्यम से समाज के लिये उचित दिशाबोध भी थालीच्य लघुनाट्य- कृति के माध्यम से करता है।

कवि इन पात्रों के माध्यम से प्रात्माभिव्यक्ति करते हुए राष्ट्रसेवकों को यह सत्परामर्श देता है कि जो जिस कार्य के योग्य है, उसी क्षमता से मातृ-भूमि की सेवा करे। हिमालय अपनी प्रौषधियों, फलसम्पदा य समुद्र अपने गर्म में प्रच्छन्न विविध प्रकार के रत्नों एवं गंगा, गोदावरी, पांगा, मित्रा आदि नदियां अपने पावन जल से किस मांति राष्ट्रसेवा में निःस्वार्थ भाव से सलग्न हैं। इन प्राकृतिक पदार्थों से हमें प्रेरणा लेनी चाहिये। इसी दिशा-निर्देश को कवि ने सजा व गोदावरी के वार्तालाप से ध्वनित किया है। बाप्रपनी सहयोगिनियों को कहती है-

कृष्णा त्वान्ध्रातमुलाधिकजलसुभगान् नर्मदा हैह्यांस्तान्
कावेरी चोलपाण्ड्यान् कलयतु मुरला केरलान् केन्पूर्णान्।
ब्राह्मावर्त्तन् शतद् मरिदय कपिशा चोलकान् दण्डकान्तान्।
गोदावर्यप्यवन्ती समविकभवान् निर्मला या च सिया॥[7]

ये गङ्गादि नदियों महज्जनों से उनकी सामर्थ्यानुसार सहायता की अपेक्षा रखती है। यथा-

चण्ड चन्द्रिका समान
कुच्चिरायो मलयानिलेन।[8]

समुद्र भी निरस्वार्थ भाव से गड़ा की बहता है- "मलेटिका विद्यन्ते विविधानि। "आदि। पिपारिटी की पात्माभिव्यन्जना प्राधुनिक युग की मांग के है। इस पात्माभिव्यक्ति को उन्होंने तुतन गेय दश्यों में भी गाया है। इनके गान जन-जन की आत्मा की आवाज है और संस्कृत भाषा को जन-जन की भाषा बनाने की ओर एक सत्प्रयास है। राष्ट्रप्रेम की भावना से प्रास्तावित उनकी वाणी से ये गान प्राकृतिक-पात्रों के माध्यम से स्वतः ही प्रस्तुति हो पड़े हैं। यथा--

जनगणरमणीभारतवरणी जयति निरन्तरमजलजननी।
तव मन्द्र' जयवाद्य विशेष प्रथयति जलनिधि राहाघोषम्।।
जनगणरमणी.....।
कुसुमे रविरलपरिमल मिलिस्तस्ततिश्चंति नवमधुकलितैः।

IJPS

(IJPS) 2016, Vol. No. 1, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

दीपद्वीपमयादसमान यस्यास्सुमहितधर्मविज्ञानम् ।।

जनगणरमणी.....। आदि[9]

पिषारटी जी ने सच्चे राष्ट्रभक्त की तस्वीर को प्राकृतिक पात्रों में पाया है और इन प्राकृतिक पात्रों का मानबीकरा कर संस्कृत भाषा को साहित्य की छायावादी प्रवृत्ति में प्रतिष्ठित कर संस्कृत को जन-जन की भाषा बनाने की प्रोर एक शुभ सङ्केत दिया है।

कर्मभारत की अखण्डता और समृद्धि के सत्प्रयासों में हिमालय एवं गङ्गादि सरिताएँ सफल भी होती हैं। अपने जल से गय को हरा-भरा बनाकर दुभिक्ष को भारत से सदा के लिये बाहर खदेड़ देते हैं और अन्त में सभी मिलकर भारतभूमि की विजयवार्ता का गीत इस तरह गाते है--

बहुविध मंसं धं में कर्मभितिविश्वजीव

बहुविधाप्यनवयशोजिनी विजयता चिर भारतावनी।

ववचन पर्वता: पल्वला: मवचित मुहलन केदार शुमय:

बहुविधेमध्येकासिनी विजयता विर भारतावनी॥

सधन निर्धने: प्राज्ञपाम है: अलसजागरुन मानवे:

बहुविधाप्यमवहारिणी विजयनो चिरं भारतावनी॥[10]

इस लघु-नाट्य-कृति का प्ररणयन वास्तविकता में संस्कृत भाषा को सरल एवं सुबोध बनाने की दिशा में एक सत्प्रयास है। साथ ही नूतन छन्द: विधान, प्रकृति का मानवीकरण] प्रतीक लक्षरण प्रयोग संस्कृत भाषा को बहु-प्रायामी बनाने हेतु सराहनीय कृत्य है। इस प्रकार पिषारिटी जी का यह लघुनाटक भारतवर्ष की ताजा समस्याओं का सच्चा-दिग्दर्शक एवं नवीन-पीढ़ी के लिये मातृभूमि की निस्स्वार्थ सेवा करने का कान्तासम्मित उपदेश है।

IJPS

(IJPS) 2016, Vol. No. 1, Jan-Jun **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

१. एकभारतम ई० पी ० भरतपिषारटी- मैसूर -१९८७

२. एकभारतम १/२

३. एकभारतम १/३ गद्य

४. एकभारतम १/६

५. एकभारतम १/१०

६. वही ३/४

७. वही ४/२

८. वही ४/३

९ . वही, चतुर्थ अंक

१०. वही, चतुर्थ अंक

IJPS